5.नामकरण

परमात्मा ने सृष्टि बनायी तो सबके नाम भी दिये । न केवल पदार्थों के अपितु हर प्राणी के और यहाँ तक कि हर मनुष्य के लिये भी आज्ञा दी कि सबका एक ऐसा नाम हो जिससे उसे पुकारा जाये । अत: आचार्यों ने हर होने वाली संतान को एक सार्थक, सरस और पुकारने में सरल हो; ऐसा नाम देने की योजना बनायी । नाम चास्मै दद्यु:- पारस्कर गृह सूत्र--हरेक को नाम दें-यही नामकरण सँस्कार की संज्ञा से जाना गया ।

यह सँस्कार जन्म के ११ वें, १०१ वें दिन या दूसरे वर्ष जन्म दिन पर होना प्रामाणिक बताया है । वैसे इन तिथियों के आस-पास अपनी सुविधानुसार ११वें दिन के वाद किसी दिन भी कर लें तो कोई हानि नहीं । निर्देशित तिथियों में हो तो सर्वोत्तम है लेकिन ऐसा भी न हो कि निर्देशित तिथि ढूँढ़ने के चकर में करें ही न । इसलिये महर्षि दयानन्द ने सुविधानुसार कहकर यजमान के लिये तिथियों के निर्धारण में काम आसान कर दिया है । अत: ११ दिन बीते पीछे जो दिन अनुकूल पड़े, उसमें कर लें ।

युग्मानि त्वेव पुंसाम्, अयुजानि स्त्रीणाम्सँस्कारविधि-महर्षि दयानन्द- इन गृह सूत्रों को महर्षि दयानन्द ने लिखा और बताया कि पुरुष का नाम युग्म-२, ४ आदि (इवेन) और स्त्री का नाम अयुग्म-३, ५ आदि (औड) अक्षरों का होना चाहिये । पर यह समयानुसार परिवर्तनशील हो सकता है । पुराने कई ऋषियों के नाम इस नियम के विपरीत प्राप्त हैं । यथा- गौतम,कपिल, कणाद, अशोक, विदुर, नारद आदि पुरुषों के और ऐसे ही अनुसूया, सीता, गंगा, यशोधरा गार्गी आदि स्त्रियों के । हाँ, इतना ध्यान अवश्य हो कि नाम सार्थक, श्रुति-प्रिय और उच्चारण में सुगमता हो । नाम के आगे शर्मा, वर्मा, गुप्त और दास आदि वर्णानुसार लगाकर अक्षर-सिद्धान्त को ठीक किया जा सकता है । ब्राह्मण का शर्मा, क्षत्रिय का वर्मा, वैस्य का गुप्त और शूद्र का दास उपनाम (सरनेम) लिकने का विधान आश्वलायन गृह सूत्र में उपलब्ध है। नामकरण-काल में वच्चे का उपनाम भी वही होगा जो माता-पिता का है पर गुरुकुलीय शिक्षा पाने के वाद जब उसकी एक निश्चित सी वृत्ति बन जाती है, तब आचार्य ही उसके गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर उसका वर्ण निधारित करता है । वही वर्ण समाज में उसका निश्चित हो जाता था पर आजकल प्राय: ऐसा नहीं मिलता वल्कि माता-पिता का वर्ण ही सारा जीवन वच्चे के साथ रह जाता है । वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार वर्ण-परिवर्त्तन गुण-कर्म-स्वभाव के आधार पर सम्भव मान्य है ।

तद्धितान्त नाम-निषेध - माता-पिता या गोत्र के नाम पर रखे नाम को " तद्धित " कहते हैं । जैसे- पाण्डव, राघव, कौन्तेय, भार्गव, वासुदेव, जानकी आदि । ये यद्यपि व्यक्ति-विशेष के लिये

खाश अर्थ में प्रयुक्त हैं पर माता-पिता या गोत्र के नाम पर होने से तद्धित हैं । पाण्डव से किसी एक का नहीं वल्कि सब पाण्डु-पुत्रों का वोध हो रहा है । अत: यह नाम उचित नहीं । नाम वही सार्थक है जो एक नाम एक का ही वोधक हो । रूढ़ी में पड़कर वह नाम एक के लिये प्रयोग होने लग जाये, वह बात अलग है-जैसे राघव आदि । रघु-कुल के सब को राघव ही कहेंगे पर अपनी ख्याति विशेष से राम को ही लोग राघव जानने लगे । वैसे ही वसुदेव-पुत्र वासुदेव केवल कृष्ण के लिये रूढ़ बन गया । जानकी केवल सीता के लिये प्रसिद्ध हुआ, अगर जनक की दो बेटियाँ होतीं तो जानकी किसे कहते ? अत: तद्धितान्त नाम दोषपूर्ण है ।

तिथि-देवता व नक्षत्र-देवता-विचार- विधि में इन के नाम से आहुतियाँ दी जाती हैं । ये आहुतियाँ हमें वच्चे के जन्म-काल का निर्देशित करती हैं । इतिहास के लिये काल-गणना में किसी के लिये भी महत्त्वपूर्ण हो सकता है । अत: तिथि तथा उसके देवता, नक्षत्र तथा उसके देवता इन चारों से कुशल पुरोहित के निर्देशन में आहुतियाँ उचित ही हैं । इसके लिये सँस्कार-विधि में महर्षि दयानन्द ने इस प्रकार एक इनकी सूची दिखायी है ।

तिथि-देवता-१-ब्रह्मन्, २-त्वष्टु,३-विष्णु,४-यम, ५-सोम, ६-कुमार, ७-मुनि, ८-वसु, ९-शिव, १०-धर्म, ११-रुद्र, १२-वायु, १३-काम, १४-अनन्त, १५-विश्वेदेव, ३०-पितर

नक्षत्र-देवता-अश्विनी-अश्वी, भरणी-यम, कृत्तिका-अग्नि, रोहिणी-प्रजापति, मृगशीर्ष-सोम, आर्द्रा-रुद्र, पुनर्वसु-अदिति, पुष्य-वृहस्पति, आश्लेषा-सर्प, मघा-पितृ, पूर्वाफल्गुनी-भग, उत्तराफल्गुनी-अर्यमन्, हस्त-सवितृ, चित्रा-त्वस्टृ, स्वाति-वायु, विशाखा-इन्द्राग्नौ, अनुराधा-मित्र, ज्येष्ठा-इन्द्र, मूल-निरृति, पूर्वाषाढा-अप्, उत्तराषाढा-विश्वेदेव, श्रवण-विष्णु, धनिष्ठा-वसु, शतभिषज-वरुण, पूर्वाभाद्रपदा-अहिर्बुन्ध्य, रेवती-पूषन्।

नाम में स्पर्श, अन्त:स्थ, ऊष्म आदि वर्णों का प्रयोग- इसका ध्यान भी आवश्यक है । यह व्याकरण की बात है । आप इन्हें ऐसा जानें- १. स्पर्श वर्ण- हर वर्ग के ३रा, ४था और ५वाँ अक्षर-ग,घ,ड., ज,झ,ञ, ड,ढ,ण, द,ध,न, ब,भ,म । २. अन्त:स्थ वर्ण- य, र, ल, व, ह और एक उष्म-श -ये घोष वर्ण भे कहे जाते हैं । जैसे-भद्र, भद्रसेन, भव, भवनाथ, हरिदेव आदि ।

स्त्रियों के नाम में ध्यातव्य बातें- इन पर नाम रखना अवैदिक माना जाता है-जैसे-नक्षत्र (रोहिणी, रेवती), वृक्ष (चम्पा, तुलसी), नदी (गंगा, यमुना), अन्त्य (चाण्डाली), पर्वत (विन्ध्याचली, हिमालया), पक्षी (कोकिला, हँसा), अहि (सर्पिणी, नागिणी), प्रेष्य (दासी, किंकरी), भयंकर (भीमा, चण्डिका) इत्यादि । इससे उनके स्वयं के गुण छिप जाते हैं, बतलाना मुश्किल सम्भावित है । उसका अर्थ नदी, पर्वत आदि तक ही सीमित रह जाता है । फिर भी पौराणिक आचार्यों के लिये ये स्वीकार्य हैं । पर वैदिक नाम चुनना सबके लिये सार्थक सिद्ध

है ।

बच्चे को माता-पिता के गोद में देना- विधिगत्यह एक प्रसिद्ध विधि है । जब बच्चे का नाम उद्घोषित करने का समय आता है तब पहले माँ बच्चे को उसके पिता के गोद में देती है फिर पिता पुन: माँ के गोद में ही वापस दे देता है । बाद में "ओ३म्प्रजापतये स्वाहा" मंत्रोच्चारण के साथ आहुति दी जाती है । प्रजापति परमात्मा का नाम है जो सब प्रजाओं का स्वामी, रक्षक व पालक है । माता-पिता के बाद हर संतान का मालिक तो प्रजापति परमात्मा ही मान्य है । अत: यह आहुति सर्वथा सार्थक ही है । हम सब परमात्मा की संतान हैं; यह भावना करके प्रजापति परमात्मा से बच्चे की पूर्ण रक्षा हेतु प्रार्थना की गयी है । लेकिन यह बात ध्यान देने योग्य है कि पिता के गोद में बच्चे को पहले माँ देती है; मानो अपने पति से कहना चाहती है कि आप ही इसके पिता हैं अत: इसकी जिम्मेवारी समझें । पिता यह भाव को समझकर पुन: बच्चे को माँ के गोद में ही वापस सौंप देता है, मानो वह कहना चाहता है कि मुझे मँजूर है, इसके विकास व रक्षा की पूरी जिम्मेवारी लेता हूँ पर इससे पूर्व जब तक यह पढ़ने-लिखने के लिये घर से बाहर नहीं जाता और विशेष कर माँ का दूध पिता है तब तक इसे मुझसे अधिक तुम्हारी जरुरत है । इस प्रकार नामकरण स्थल सभा में दोनों बच्चे के पालन-पोषण व पूर्ण विकास हेतु आवश्यक साधन-सामग्री जुटाने का व्रत धारण करते हैं ।

बच्चे के नासिका-द्वार पर पिता द्वारा वायु का स्पर्श-बच्चे के दायें नासिका-द्वार पर पिता उँगली रखकर मंत्र बोलता है-"कोऽसि कतमोऽसि कस्यासि को नामासि----इत्यादि" । यहाँ प्रथम तो पिता अनुभव करता है कि बच्चे का श्वास भली-भाँति चल रहा है । पिता के लिये इतना ज्ञान तो अपेक्षित है कि वह बच्चे के श्वास-प्रश्वास को समझ सके । दूसरी बात है कि पिता बच्चे को देखकर स्वाभाविक रुप से प्रसन्न हो जाता है और उसे भी हँसाना चाहता है । प्यार से वह बच्चे के नासिकाग्र पर जब ऊँगलि रखता है तब बच्चा भी हँसने या प्रसन्नमुद्रा दिखने का यत्न करता है । हम इसे पितृ-प्यार का एक नमुना कह सकते हैं । प्रसन्न होता हुआ पिता मंत्र के माध्यम से कुछ प्रश्न पूछता है-कोऽसि---इत्यादि जिनका सामान्य अर्थ है-तुम कौन हो, कहाँ से आये हो, किसके हो और किस नामवाले हो ? इन प्रश्नों में बड़ा भारी पुनर्जन्म का सिद्धान्त छिपा हुआ है । कुछ अच्छी चीज जब हाथ में आती है तब जहाँ उसे पाने की प्रसन्नता होती है वहीं उसका अतीत व कुछ विशेष भी जानने की उत्सुकता जाग उठती है । वस, फिर क्या है-ऐसा जानें कि पिता गोद में आये बच्चे की आत्मा के पूर्व की स्थिति को जानने हेतु उत्सुक होते हुये प्रसन्नता वस इस तरह के प्रश्न करने लग जाता है और इन प्रश्नों के माध्यम से जानना चाहता है कि वह आत्मा कौन है, कहाँ से आयी है, पूर्वकाल में किसकी थी और किस नामवाली थी ? स्पष्ट ही वेद ज्ञान का संकेत पुनर्जन्म की ओर है । शरीरधारी हर आत्मा कोई न कोई शरीर छोड़कर आती है । इसी तरह वह आत्मा शरीर छोड़कर भी पुन: शरीर धारण कर उसके द्वारा जन्मजन्मान्तर के कर्मफल का भुगतान

करती है । यह आत्मा की प्रथम अवस्था है, अगर उसके कर्म इतने अच्छे हुये हैं कि उसे अब आवागमन का चक्र से छूटकारा मिल गया है तो उसे सीधा मुक्ति मिल जाती है-यह आत्मा की दूसरी अवस्था है । पिता सबके के बीच संतान को गोद में लेकर ऐसी ही प्रसन्नता और उपयुक्त ज्ञान-प्रक्रिया में आकर अनुभूति करता हुआ बच्चे को अपनी संतान स्वीकारता हुआ उसका विधिवत्नामकरण कर उसके पालन-पोषण की पूरी जिम्मेवारी लेता है । यहाँ एक और आध्यात्मिक अर्थ उभरकर आ सकता है । "क नाम सुखम्" ऐसा वैदिक ग्रन्थों में पढ़ा गया है । "क" का अर्थ सुख विशेष है तो इससे पिता अपनी प्रसन्नता इस प्रकार अभिव्यक्त करना चाहता है । कोऽसि=तुम मेरा सुख हो, कतमोऽसि= सुखरुप गृहस्थ प्रक्रिया से तुम मुझे मिले हो, कस्यासि=सब की भाँति तुम भी सुखस्वरुप प्रभु की संतान हो और को नामासि= सुखदेने वाली आत्मा रुप तुम मेरी संतान हो । पिता बच्चे के शिर पर हाथ रखकर उसे जीवन भर सुखी रहने का आशीर्वाद देकर सब आवश्यक साधन देने की प्रतिज्ञा करता है ।

आशीर्वाद- अन्त में उपस्थित लोगों के साथ पुरोहित माता-पिता के गोद में यज्ञ वेदी पर बैठे बच्चे को इस प्रकार आशीर्वाद देता है-हे बालक/बालिके ! त्वं आयुष्मान्/आयुष्मती, वर्चस्वी/वचस्विनी, तेजस्वी/तेजस्विनी श्रीमान्/श्रीमती भूया:। अर्थात्बालक या बालिका आयुष्मान्या आयुष्मती, तेजस्वी/तेजस्विनी, वर्चस्वी/वर्चस्विनी और श्रीमान्/ श्रीमती बने ।

नोट- श्रीमान्/श्रीमती गृहस्थ अवस्था तक जाकर सुख पाने का आशीर्वाद है जो सब उपस्थित लोग बच्चे को देते हैं । कितना सुन्दर आशीर्वाद है । गृहस्थ सुख पाना सब चाहते हैं यह भाव यहाँ साक्षात्मुखरित हो आया है ।

Naamkaran ka Mantra-vidhi bhaaga